eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 04, April 2025

प्राकृत साहित्यानुसार जैन पञ्चांगीय काल विवेचन

डॉ0 आकाश[1]

[1]पीएच0 डी0, ज्योतिष विभाग, श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय, संस्कृत विश्वविद्यालय नई दिल्ली

Received: 15 April 2025 Accepted & Reviewed: 25 April 2025, Published: 30 April 2025

Abstract

प्राकृत साहित्य, विशेषतः जैन आगमों और उत्तराध्ययन सूत्र, आदि ग्रंथों में काल-विवेचन का विशद वर्णन प्राप्त होता है। जैन दर्शन में काल को पंचांगीय पद्धति के अनुसार विभाजित किया गया है, जो समय की व्यापकता एवं चक्रात्मकता को दर्शाता है। जैन कालचक्र दो मुख्य भागों में विभाजित है- उत्तरसंघी और अवसर्पिणी, जो पुनरावृत्तिशील हैं और प्रत्येक छह कालों में विभाजित होते हैं। प्राकृत ग्रंथों में इन कालों के लक्षण, गुण, समाज की स्थिति, नैतिक मूल्यों तथा आध्यात्मिक पतन/उत्थान की स्थिति का विश्लेषण किया गया है। यह शोध-पत्र जैन पंचांगीय काल-विवेचना की अवधारणा को प्राकृत साहित्य के आधार पर प्रस्तुत करता है, साथ ही यह भी विश्लेषण करता है कि किस प्रकार यह समय दृष्टिकोण भारतीय सांस्कृतिक और दार्शनिक परंपरा में अद्वितीय स्थान रखता है।

मुख्य शब्द - प्राकृत साहित्य, जैन दर्शन, पंचांगीय काल, अवसर्पिणी, उत्सर्पिणी, कालचक्र, जैन आगम, उत्तराध्ययन सूत्र

Introduction

प्राकृत साहित्यानुसार जैन पञ्चांगीय काल विवेचन

"ज्योतिष्काः सूर्याचन्द्रमसौ ग्रहनक्षत्रप्रकीर्णकतारकाश्च॥" [1]

ज्योतिष शास्त्र अत्यन्त प्राचीन विधा है काल गणना हि काल जगत के व्यवहार का मूल कारण है। एक चान्द्र वर्ष में ३५४ दिन ५६२ मुहूर्त होते हैं, और एक युगसे ६० सौर मास, ६१ सावन मास, ६२ चान्द्र मास और ६७ नाक्षत्र मास होते हैं।

एक नाक्षत्र वर्ष = ३२७६ दिन

एक चान्द्र वर्ष = ३५४३ दिन

एक सावन वर्ष = ३६० दिन

एक सौर वर्ष = ३६६ दिन

अधिकमास सहित एक चान्द्र वर्ष = ३८३ दिन २१

ऐसे ही जैन पञ्चांगकी प्रणाली बहुत प्राचीन है । जिस समय भारतवर्ष में ज्योतिष के गणित सम्बन्धी ग्रन्थोंका प्रचार विशेष रूप से नहीं हुआ था, उस समय भी जैन ज्योतिष बहुत पल्लवित और पुष्पित था । तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण इन पाँचोंका ही नाम पञ्चाङ्ग है । इनकी प्रक्रिया जैसी जैन गणित ज्योतिष के ग्रन्थोंमें है वैसी अन्यत्र एकाध ग्रन्थमें ही देखनेको मिलेगी ।

तिथि - सूर्य और चन्द्रमाके अन्तराशोंसे तिथि बनती है, और इनका मान १२ अंशोंके बराबर होता है । क्योंकि सूर्य और चन्द्रमा अपनी गतिसे गमन करते हुए ३० दिनमें ३६० अंशोंसे अन्तरित होते हैं । मध्यम मानसे तिथिका मान १२ अंश अर्थात् ६० घटी अथवा ३० मुहूर्त्त होता है ।

वार - सूर्यादि वार ज्ञान 24 होरा के बाद अगली होरा अगला दिन होत है |

[1] तत्त्वार्थसूत्रम्- ४/१२

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 04, April 2025

नक्षत्र - अश्विनी-रेवति आदि ,प्रत्येक ग्रहका भिन्न-भिन्न नक्षत्र मान होता है। किन्तु पञ्चाङ्ग के लिये चन्द्र नक्षत्र को ही लिया जाता है । इसी को दैनिक नक्षत्र भी कहते हैं । जैन आचार्यों ने गगन-खण्ड मानकर प्रत्येक ग्रह के नक्षत्र का साधन सुगम रीति से किया है । जैन आचार्यों की मान्यता से सूर्य नक्षत्र का मध्यम मान १४ दिन से अधिक और १५ दिनसे कम आता है । बुध गुरु आदि के नक्षत्रों का मान तो मध्यम रीति से १३ दिन के लगभग आता है । वाजसनेयी संहिता में 'प्रज्ञानाय नक्षत्रदर्श यादसे गणकं' सूक्ति आयी है। इसमें प्रयुक्त नक्षत्रदर्श और गणक ये दो शब्द बहुत उपयोगी हैं, इनसे प्रकट होता है कि उदयकाल ज्योतिष की मीमांसा शास्त्रीय दृष्टि से की जाने लगी थी

प्रश्नव्याकरणांग में नक्षत्रों के फलों का विशेष ढंग से निरूपण करने के लिए इनका कुल, उपकुल और कुलोपकुलों में विभाजन कर वर्णन किया गया है :

ता कहंते कुला उवकुला कुलावकुला आहितोति वदेज्जा ?

तत्थ खलु इमा बारस कुला बारस उवकुला चत्तारि कुलावकुला पण्णता ॥ बारस कुला तं जहा-धणिट्ठाकुलं, उत्तराभद्दवयाकुलं, अस्सिणीकुलं, कत्तियाकुलं, मिगसिरकुलं, पुस्सोकुलं, महाकुलं, उत्तराफग्गुणीकुलं, चित्ताकुलं, विसाहाकुलं, मूलोकुलं, उत्तराषाढाकुलं ॥ बारस उवकुला पण्णत्ता तं जहा-सवणो उवकुलं, पुव्वभद्दवया उवकुलं, रेवतिउवकुलं, भरणिउवकुलं, रोहिणीउवकुलं, पुणावसुउवकुलं, असलेसाउवकुलं, पुव्वफग्गुणी उवकुलं, हत्थे उवकुलं, साति उवकुलं, जेट्ठाउवकुलं, पुव्वासाढाउवकुलं ॥ चत्तारि कुलावकुलं पण्णत्ता तं जहा- अभिजिति कुलावकुलं, सतभिसया कुलावकुलं, अद्दाकुलावकुलं, अणुराहा कुलावकुलं ।[2]

अर्थात्-बारह नक्षत्र कुल, बारह उपकुल और चार नक्षत्र कुलोपकुल संज्ञक हैं। घनिष्ठा, उत्तराभद्रपद, अश्विनी, कृत्तिका, मृगशिर, पुष्य, मघा, उत्तराफाल्गुनी, चित्रा, विशाखा, मूल एवं उत्तराषाढ़ा ये नक्षत्र कुलसंज्ञक; श्रवण, पूर्वाभाद्रपद, रेवती, भरणी, रोहिणी, पुनर्वसु, आश्लेषा, पूर्वाफाल्गुनी, हस्त, स्वाति, ज्येष्ठा एवं पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र उपकुलसंज्ञक और अभिजित्, शतभिषा, आर्द्रा एवं अनुराधा कुलोपकुलसंज्ञक हैं। यह कुलोपकुल का विभाजन पूर्णमासी को होनेवाले नक्षत्रों के आधार पर किया गया है। सारांश यह है कि श्रावण मास के धनिष्ठा, श्रवण और अभिजित्; भाद्रपद मास के उत्तराभाद्रपद, पूर्वाभाद्रपद और शतभिष; क्वार या आश्विन मास के अश्विनी और रेवती; कार्तिक मास के कृत्तिका और भरणी; अगहन या मार्गशीर्ष मास के मृगशिर और रोहिणी; पौषमास के पुष्य, पुनर्वसु और आर्द्रा; माघ मास के मघा और आश्लेषा; फाल्गुन मास के उत्तराफाल्गुनी और पूर्वाफाल्गुनी; चैत्र मास के चित्रा और हस्त; वैशाख मास के विशाखा और स्वाति; ज्येष्ठ मास मूल, ज्येष्ठा और अनुराधा एवं आषाढ़ मास के उत्तराषाढ़ा और पूर्वाषाढ़ा नक्षत्र बताये गये हैं।

<u>प्रत्येक मास की पूर्णमासी को उस मास का प्रथम नक्षत्र कुलसंज्ञक, दूसरा उपकुलसंज्ञक कुलोपकुलसंज्ञक होता है।</u> अर्थात् श्रावण मास की पूर्णिमा को घनिष्ठा पड़े तो कुल, श्रवण हो तो उपकुल और अभिजित् हो तो कुलोपकुलसंज्ञा वाला होता है। इसी प्रकार आगे के मासवाले नक्षत्रों की संज्ञा का ज्ञान किया जा सकता है। इस संज्ञा का प्रयोजन उस महीने के फलादेश से बताया गया है।

नक्षत्रों के दिशाद्वार का प्रतिपादन करते हुए समवायांग में बताया गया है कि :

कत्तिआइया सत्तणक्खत्ता पुव्वदारिआ । महाइआ सत्तणक्खत्ता दाहिणदारिआ । अणुराहाइआ सत्तणक्खत्ता अवरदारिआ । धणिट्ठाइआ सत्तणक्खत्ता उत्तरदारिआ ।[3]-

अर्थ-कृत्तिका, रोहिणी, मृगशिर, आर्द्रा, पुनर्वसु, पुष्य और आश्लेषा-ये सात नक्षत्र पूर्व द्वार;

मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, स्वाति और विशाखा-ये सात नक्षत्र दक्षिण द्वार;

अनुराधा, ज्येष्ठा, मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा, अभिजित् और श्रवण-ये सात नक्षत्र पश्चिम द्वार

एवं घनिष्ठा, शतभिषा, पूर्वाभाद्रपद, उत्तराभाद्रपद, रेवती, अश्विनी और भरणी-ये सात नक्षत्र उत्तर द्वारवाले हैं।

[2] - प्र .व्या. १०.५

[3] संमवायांग.अं.सं. ७., सू.५

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 04, April 2025

ठाणांग में चन्द्रमा के साथ स्पर्शयोग करनेवाले नक्षत्रों का कथन करते हुए बताया गया है कि :

अट्ठ नक्खत्ताणं चेदेण सद्धिंध पमड्ढं जोगं जीएइ तं. कत्तिया रोहिणी पुणव्वसु महा चित्ता विसाहा अणुराहा जिट्ठा ।[4]

अर्थात्-कृत्तिका, रोहिणी, पुनर्वसु, मघा, चित्रा, विशाखा, अनुराधा और ज्येष्ठा ये आठ नक्षत्र स्पर्श योग करनेवाले हैं। इस योग का फल भी तिथि के हिसाब से बताया गया है। इसी प्रकार नक्षत्रों की अन्य संज्ञाएँ तथा उत्तर, पश्चिम, दक्षिण और पूर्व दिशा की ओर से चन्द्रमा के साथ योग करनेवाले नक्षत्रों के नाम और उनके फल विस्तारपूर्वक बताये गये हैं।

उदयकाल के समग्र साहित्य पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि इस युग में नक्षत्रज्ञान की इतनी उन्नति हुई थी जिससे नक्षत्रों की ताराएँ और उनके आकार भी विचार के विषय बन गये थे । हस्त नक्षत्र की पाँच ताराएँ हाथ के आकार की हैं, जिस प्रकार हाथ में पाँच अँगुलियाँ होती हैं उसी प्रकार हस्त की पाँच ताराएँ भी । तैत्तिरीय ब्राह्मण में नक्षत्रों की आकृति प्रजापति के रूप में मानी गयी है :

यो वै नक्षत्रियं प्रजापतिं वेद । उभयोरेनं लोकयोर्विदुः । हस्त एवास्य हस्तः । चित्रा शिरः । निष्ट्या हृदयं । ऊरू विशाखे । प्रतिष्ठानुराधाः । एष वै नक्षत्रियः -[5]

अर्थात्-नक्षत्ररूपी प्रजापति का चित्रा सिर, हस्त हाथ, घनिष्ट्या -स्वाति हृदय, विशाखा जंघा एवं अनुराधा पाद हैं। इसी ग्रन्थ में एक स्थान पर आकाश को पुरुषाकार माना गया है। इस पुरुष का स्वाति हृदय बताया गया है। शतपथ ब्राह्मण और तैत्तिरीय ब्राह्मण में नक्षत्रों की आकृति का बड़ा सुन्दर विवेचन है। [6]

योग - यह सूर्य और चन्द्रमा के योग से पैदा होता है । प्राचीन जैन ग्रन्थ में मुहूर्त्त आदि के लिये इसको प्रधान अङ्ग दिया गया है । व्यतीपात, परिघ, गण्ड - इनका त्याग तो प्रत्येक शुभकार्य में कहा गया है । गणित शास्त्र की रीति से सूर्य चन्द्रमा के दैनिक गगन-खण्ड के योग में ८०० का भाग देने से लब्ध घटिकादि रूप योग आता हैं |

जैन आगममें संवत्सर का मान चार प्रकार का माना गया है ।

(१) नाक्षत्र संवत्सर = १२ नाक्षत्र मास = १२ x २७३७ दिन = ३२७६७ दिन

(२) युगसंवत्सर

(३) प्रमान संवत्सर

(४) शनि संवत्सर

इनमें से पहले नाक्षत्र सम्वत्सर के १२ भेद हैं । श्रावण, भाद्रपद आदि । जब बृहस्पति सभी नक्षत्र समूह को भोगकर पुनः अभिजित् पर आता है तब यह महानाक्षत्र संवत्सर होता है । इसका समय १२ वर्षका है ।

चान्द्रवर्ष = २९३३ × १२ = ३५४ + ३ दिन, अधिक मास सहित चान्द्रवर्ष = ३८३४ई दिन सौरवर्ष = १२ × ३० - ३६६ दिन ।

अयन - माघ शुक्ल प्रतिपत् धनिष्ठा दक्षिणायन | श्रावण शुक्ल सप्तमी चित्रा मृगशिर उत्तरायण माघ शुक्ल त्रयोदशी आर्द्रा शतभिप दक्षिणायन विशाखा उत्तरायण दक्षिणायन पुष्य रेवती दक्षिणायन श्रावणकृष्ण प्रतिपत् अभिजित् उत्तरायण उत्तरायण माघ कृष्ण | सप्तमी हस्त दक्षिणायन श्रावणकृष्ण त्रयोदशी उत्तरायण माघ शुक्ल चतुर्थी दक्षिणायन श्रावण शु० दशमी उत्तरायण माघ कृष्ण प्रतिपत् दक्षिणायन श्रावणकृष्ण सप्तमी उत्तरायण माघ कृष्ण त्रयोदशी दक्षिणायन श्रावण शु० नवमा पूर्वाफा • उत्तरायण उत्तरायण माघकृष्ण त्रयोदशी कृत्तिका मूल श्रावण शुक्ल चतुर्थी पूर्वाभाद्रपद् उत्तरायण दक्षिणायन माघ कृष्ण दशमी श्रावण शुक्ल प्रतिपत् माघ शुक्ल सप्तमी अश्विनी श्रावण शुक्ल त्रयोदशी पूर्वाषाढ़ा माघ कृष्ण चतुर्थी उत्तराफाल्गुनी अनुराधा आश्लेषा दक्षिणायन श्रावण कृष्ण दशमी रोहिणी |

[4] - ठाणाङ्ग.अं.ठा.८,सू.१००

[5] तैत्तरीय. ब्रा.१.५.२ प्रजापतिः ।

[6] भारतीय ज्योतिष – पेज ६०

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 04, April 2025

इस चक्र से भी प्रतीत होता है कि जैन शास्त्रोंकी अयनवृत्ति हिन्दू ज्योतिष ग्रन्थों से नहीं मिलती है । क्योंकि हिन्दू ज्योतिष ग्रन्थों में सबसे प्राचीन ज्योतिष ग्रन्थ 'वेदाङ्ग ज्योतिष' है और इसकी अयन प्रवृत्ति जैन प्रक्रिया से भिन्न है, अतएव यह मानना पड़ेगा कि जैन ज्योतिष स्वतन्त्र है । परन्तु बादमें विकसित नहीं हुआ है और इसी से यह पिछड़ गया है । पर्व और तिथियोंमें नक्षत्र लानेका जैन ज्योतिषका प्रकार यह है :

नक्षत्राणां परावर्त चन्द्रिसम्बन्धिनामथ ।
ब्रूमहे प्रत्यहोरात्रं सूर्यसम्बन्धिनामपि ॥
भवत्यभिजिदारम्भो युगस्य प्रथमक्षणे ।
अस्य पूर्वोक्ता शीतांशु भोगकालादनन्तरम् ॥
श्रावणं स्यात्तस्य चेन्दुभोगकालनतिक्रमे
धनिष्ठेत्येवमादीनि ज्ञेयानि निखिलान्यपि ॥
अथेन्दुना भुज्यमानमहोरात्रे विवक्षते ।
इष्टे तिथौ च नक्षत्रं ज्ञातुं करणमुच्यते ॥ [7]

अर्थात् युगादिमें अभिजित् नक्षत्र होता है । चन्द्रमा अभिजित्को भोग कर श्रवणसे शुरू होता है और अग्रिम प्रतिपत्को मघा नक्षत्र पर आता है। इस प्रकारसे सम्पूर्ण पर्व और तिथियोंमें नक्षत्र लाने चाहिए। इसके गणितका नियम इस प्रकार है-पर्वकी संख्याको १५ से गुणा कर गत तिथि संख्याको जोड़कर जो हो उसमें २ घटा कर शेष में ८२ का भाग देने से जो शेष रहे उसमें २७ का भाग देनेपर जो शेष आवे, उतनी ही संख्या वाला नक्षत्र होता है, परन्तु नक्षत्र गणना कृत्तिका से लेनी चाहिये ।

करण - यह तिथि का आधा भाग होता है । कुल ११ करण होते हैं, जिनमेंसे ७ करण चर संज्ञक हैं, और शेष चार करण स्थिति संज्ञक हैं जो निश्चित तिथियों में ही आते हैं । परन्तु चर संज्ञक करणों में से एक करण पूर्वार्ध तिथि में और दूसरा उत्तरार्द्ध में आता है । जैन पञ्चाङ्गमें युगका मान ५ वर्ष लिया गया है। चन्द्रनक्षत्र एवं सूर्यादि नक्षत्र, योग आदिका साधन किया है।

इसी पञ्चवर्षात्मक युगपरसे
इस युगका आरम्भ अभिजित्
नक्षत्रसे होता है । एक चान्द्र वर्ष में ३५४ दिन ५५२ मुहूर्त्त होते हैं, और एक युगसे ६० सौर मास, ६१ सावन मास, ६२ चान्द्र मास और ६७ नाक्षत्र मास होते हैं ।

एक नाक्षत्र वर्ष = ३२७६७ दिन
एक चान्द्र वर्ष = ३५४६३ दिन
एक सावन वर्ष = ३६० दिन
एक सौर वर्ष = ३६६ दिन
अधिकमास सहित एक चान्द्र वर्ष = ३८३ दिन २१ ई मु० ।

एक ५ वर्षीय युग में चन्द्रमा अभिजित् नक्षत्र का भोग ६७ बार करता है, ये ही ६७ चन्द्रमा के भगण कहलाते हैं । अतः पंचवर्षीय एक युग के दिनादि का मान इस प्रकार होगा :

एक युगमें सौर दिन = १८००
चान्द्र मास = ६२

[7] काल लोक प्रकाश पृ० ११४ ।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 04, April 2025

चान्द्र दिन = १८६०

क्षय दिन = ३०

चान्द्र भगण = ६७

भगण वा नक्षत्रोदय = १८३०

चान्द्र सावन दिन = १७६८

एक सौर वर्ष में नक्षत्रोदय = ३६७

एक अयनसे दूसरे अयन पर्यन्त सौर दिन = १८०

एक अयनसे दूसरे अयन तक सावन दिन = १८३

प्राचीन जैन महीनों के नाम भी वर्तमान महीनों के नामों से भिन्न मिलते हैं । उनकान विवरण इस प्रकार है

वर्तमान महीनोंके नाम	प्राचीन जैन महीनोंके नाम
१ श्रावण	अभिनन्द
२ भाद्रपद	सप्रतिष्ठा
३ आश्विन	विजया
४ कार्तिक	प्रतिवर्धन
५ मार्गशीर्ष	श्रीयान्
६ पौष	शिव
७ माघ	शिशिर
८ फाल्गुन	हैमवान्
९ चैत्र	वसन्त
१० वैशाख	कुसुमसंभव
११ ज्येष्ठ	निदाघ
१२ आषाढ़	दान - विरोधी

संवत्सरके पांच भेद हैं

(१) साबन (२) सौर (३) चान्द्र (४) बार्हस्पति (५) नाक्षत्र । इनमेंसे सावन संवत्सर कर्म-संवत्सर भी कहते हैं । इसके कर्म संवत्सर नाम पड़नेका यह कारण मालूम पड़ता है कि साधारण कामकाजी लोग ३६० दिनमें ही अपने वर्षके कार्यको पूरा करते हैं । इसीसे इस संवत्सरका नाम कर्म संवत्सर पड़ा होगा ।

एक चान्द्र संवत्सरमें ३५४३ दिन होते हैं; अतएव एक चान्द्र मासमें ३५४३३ २९३३ दिन होते हैं और एक चान्द्रमासमें दो पक्ष होते हैं । इसीलिए २९३३ दिन= २९३३ दिन = २९३३x १५ मुहूर्त - ४४२३ मुहूर्त शुक्ल पक्ष और इतने ही मुहूर्त कृष्ण पक्षके भी होते हैं। इस हिसाबसे एक तिथिका मान - २९३३ दिन = हेरे, दिन=३ x ३०=२९३३ मुहूर्त । तिथिके भी दिन और रात्रिके भेदसे दो भेद हैं । सौर दिनकी अपेक्षासे दिन तिथि और रात्रि तिथिके पाँच-पाँच भेद हैं। उनका क्रम इस प्रकार है ।

(१) नन्दा (२) भद्रा (३) जया (४) तुका (५) पूर्णा । और रात्रि तिथिके ये भेद हैं (१) अग्रावर्ती (२) भोगवर्ती (यासोमतो) (४) सर्वसिद्धा (५) शुभनामनी ।

जैन ज्योतिष की गणना से एक वर्ष में ५ ऋतुएँ होती हैं (१) वर्षा (२) शरद् (३) शिशिर (४) वसन्त (५)ग्रीष्म ।

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 04, April 2025

ये ऋतुएँ भी चान्द्र और सौर दोनों ही प्रकारकी होती हैं । जैन ग्रन्थोंके उत्तरायण और दक्षिणायनका विचार भी प्राचीन तथा अर्वाचीन हिन्दू ज्योतिष ग्रन्थोंसे भिन्न है। सूर्य प्रज्ञप्ति में अयनका विचार भी इस प्रकार लिखा है :

सावण बहुल पडिवए बालवकरणे अभिजिन्नक्षत्रे ।
सव्वत्थ पडमसमये जुअस्स आदि वियाणाहि ||[8]

तत्र उत्तरायणं कुर्वन् सूर्यः सर्वदैव अभिज्ञा नक्षत्रेण सह योगमुपागच्छति । दक्षिणायनं कुर्वन् पुष्येणेति च ।

अर्थात् श्रावण बदी प्रतिपद् बालवकरण, अभिजित नक्षत्र में दक्षिणायन प्रारम्भ होता है। यह युगका पहला दक्षिणायन है । एक युगके शेष अयनोंका वर्णन इस प्रकार है : प्रथमा वहुल पडिवए विइया बहुलस्स तेरिसीदिवसे । सुद्धस्स य दसमीए बहुलस्स य सप्तमीए उ ॥ सुद्धस्स चउत्थीए पवत्तये पंचमी उ आउठ्ठी । एया आबुद्धीयो सव्वाओ सावणे मासे । बहुलस्स सत्तमीए पडमा सुद्धस्स तो चउत्थीए । बहुलस्स य पडिवए बहुलस्स य तेरिसी दिवसे ।। सुद्धस्स य दसमीए पवत्तए पंचमी आउट्ठी । एना आउठ्ठीओ सव्वाओ माहमासम्मि ॥ ईसवी सन् की ७वीं और ८वीं सदी के मध्य में 'चन्द्रोन्मीलन' नामक प्रश्न-ग्रन्थ प्रसिद्ध था, जिसके आधार पर 'केरल प्रश्न' का आविष्कार भारत में हुआ है। अतएव यह मानना पड़ेगा कि प्रश्न अंग का जन्म भारत में हुआ और उसकी पुष्टि ईसवी सन् ७००-९०० तक के समय में विशेष रूप से हुई ।

उद्योतन सूरि की कृति कुवलयमाला में ज्योतिष और सामुद्रिकविषयक पर्याप्त निर्देश पाया जाता है। इस ग्रन्थ का रचनाकाल शक संवत् ७०० में एक दिन न्यून है अर्थात् शक ६९९ चैत्र कृष्णा चतुर्दशी को समाप्त किया गया है। उद्योतन द्वादश राशियों में उत्पन्न नर-नारियों का भविष्य निरूपण करते हुए लिखा है :

णिच्चं जो रोगभागी णरवइ-सयणे पूइओ चक्खुलोलो, धम्मत्थे उज्जमंतो सहियण-वलिओ ऊरुजंघो कयण्णू |
सूरो जो चंडकम्मे पुणरवि मउओ वल्लहो कामिणीणं, जेट्ठो सो भाउयाणं जल- णिचय -महा-भीरुओ मेस- जाओ ।।[9]

अर्थात् - मेष राशि में उत्पन्न हुआ व्यक्ति रोगी, राजा और स्वजनों से पूजित, चंचल नेत्र, धर्म और अर्थ की प्राप्ति के लिए उद्योगशील, मित्रों से विमुख, स्थूल जाँघवाला, कृतज्ञ, शूरवीर, प्रचण्ड कर्म करनेवाला, अल्पधनी, स्त्रियों का प्रिय, भाइयों में बड़ा एवं जल-समूह - नदी, समुद्र आदि से भीत रहनेवाला होता है ।

अट्ठारस-पणुवीसो चुक्को सो कह वि मरइ सय-बरिसो । अंगार- चोद्दसीए कित्तिय तह अड्ड-रत्तम्मि ।।[10]

मेष राशि में जन्मे व्यक्ति को १८ और २५ वर्ष की अवस्था में अल्पमृत्यु का योग आता है । यदि ये दोनों अकालमरण निकल जाते हैं तो सौ वर्ष की आयु में मरणकाल आता
है और कार्तिक मास की शुक्ला चतुर्दशी की मध्यरात्रि में मरण होता है।

भोगी अत्थस्स दाया पिहुल-गल-महा-गंडवासो सुमित्तो
दक्खो सच्चो सुई जो सललिय-गमणो दुट्ठ-पुत्तो कलत्तो ।
तेयंसी भिच्च - जुत्तो पर - जुवइ - महाराग-रत्तो गुरूणं
गंडे खंधे ल चिन्हं कुजण-जण-पिओ कंठ-रोगी विसम्मि ।।
चुक्को चउप्पयाओ पणुवीसो मरइ सो सयं पत्तो ।
मग्गसिर-पहर - सेसे बुह - रोहिणि पुण्ण-खेत्तम्मि ।।[11]

वृष राशि में उत्पन्न हुआ व्यक्ति भोगी, धन देनेवाला, स्थूल गलेवाला, बड़े-बड़े गालवाला-कपोलवाला, अच्छे मित्रवाला, दक्ष, सत्यवादी, शुचि, लीलापूर्वक गमन करनेवाला, दुष्ट, पुत्र-स्त्रीवाला, तेजस्वी, भृत्ययुक्त, परस्त्रियों का अनुरागी, कन्धे और गले

[8] सूर्य प्रज्ञप्ति
[9] - कुवलयमाला, पृ. १९
[10] - कुवलयमाला, पृ. १९
[11] - कुवलयमाला, पृ. १९

eISSN 2583-6986
IDEALISTIC JOURNAL OF ADVANCED RESEARCH IN PROGRESSIVE SPECTRUMS (IJARPS)
A MONTHLY, OPEN ACCESS, PEER REVIEWED (REFEREED) INTERNATIONAL JOURNAL
Volume 04, Issue 04, April 2025

पर तिल या मस्से के चिह्न से युक्त तथा लोगों के लिए प्रिय होता है। इसका चतुष्पद-पशु आदि के कारण से पच्चीस वर्ष की अवस्था में अकालमरण सम्भव होता है।

जैन - मान्यता की दृष्टि से विचार करने पर अन्धकारकाल के ज्योतिष - तत्त्व पर बड़ा सुन्दर प्रकाश पड़ता है। इस मान्यता के अनुसार यह संसार अनादिकाल से ऐसा ही चला आ रहा है, इसमें न कोई नवीन वस्तु उत्पन्न होती है और न किसी का विनाश ही होता है, केवल वस्तुओं की पर्यायें बदला करती हैं। इस संसार का कोई स्रष्टा नहीं है, यह स्वयंसिद्ध है। किन्तु भरत और ऐरावत क्षेत्र में अवसर्पण काल के अन्त में खण्ड प्रलय होता है जिससे कुछ पुण्यात्माओं को, जो विजयार्द्ध की गुफाओं में छिप गये थे, छोड़ शेष सभी जीव नष्ट हो जाते हैं । उत्सर्पण के दुःषमा दुःषमा नामक प्रथम काल में जल, दूध और घी की वृष्टि से जब पृथ्वी चिकनी रहने योग्य हो जाती है तो वे बचे हुए जीव आकर बस जाते हैं और फिर उनका संसार चलने लगता है। जैन मान्यता में बीस कोड़कोड़ी अद्धा' सागर का कल्पकाल बताया गया है। इस कल्पकाल के दो भेद हैं-एक अवसर्पण और दूसरा उत्सर्पण। अवसर्पणकाल के सुषम-सुषम, सुषम, सुषम-दुःषम, दुःषम- सुषम, दुःषम और दुःषम-दुःषम- ये छह भेद तथा उत्सर्पण के

१. यह अरब-खरब की संख्या से कई गुना अधिक होता है।[12]

[12] भारतीय संस्कृतिके विकासमें जैन वाङ्मयका अवदान